

पत्रिका

• संस्थापक •
कर्पूर चन्द्र कुलिश



नई पौध की कमजोर नींव के प्रति बेरुखी

देश में स्कूल शिक्षकों की संख्या के संबंध में यूनेस्को की ताजा रिपोर्ट चिंता में डालने वाली है। बच्चे देश का भविष्य होते हैं और उनकी मौजूदा स्थिति कैसी है और किस तरह उन्हें तैयार किया जा रहा है। इस पर ही भविष्य तय होता है। यूनेस्को की रिपोर्ट इस पूरे परिदृश्य को सामने ला देती है। स्थिति किसी भी रूप में संतोषजनक नहीं है। सरकार के एक लाख 11 हजार स्कूल सिर्फ एक शिक्षक के भरोसे चल रहे हैं। पहली, दूसरी, तीसरी और इससे भी आगे की कई कक्षाएं। एक शिक्षक किस तरह सभी कक्षाओं को संभाल सकता है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि अन्य स्कूलों की स्थिति बेहतर है। प्राथमिक और उच्च प्राथमिक ही नहीं, माध्यमिक स्कूल तक सरकार की प्राथमिकता में नहीं हैं। इन सभी में कुल मिलाकर 11.16 लाख शिक्षकों की कमी है। ऐसे में गुणवत्ता की बात करना तो सर्वथा बेमानी है। यूनेस्को की रिपोर्ट है, इसलिए पूरी दुनिया में भारत की यह तस्वीर पेश हुई है। दुनिया में हमारे बारे में जा रहे विपरीत संदेश को एक पल के लिए दरकिनार भी कर दें, तो भी यह तय है कि देश की भावी पीढ़ी के भविष्य का सांवा पुख्ता नहीं है। सबसे दुखद पहलू यह है कि सरकार को इस बारे में अच्छी तरह पता है और इसके बावजूद उसके स्तर पर कोई पहल नहीं है। पिछले आठ-दस साल का इतिहास देखेंगे तो पाएंगे कि सरकारी स्कूलों को तो एक तरह से निशाने पर लिया हुआ है। अभी की रिपोर्ट है कि एक लाख 11 हजार स्कूलों में सिर्फ एक शिक्षक है। पहले भी ऐसे हजारों स्कूल रहे हैं, जिनमें एक या कम शिक्षक होने के कारण विद्यार्थियों की संख्या निरंतर कम होती गई। एक दिन ऐसा आया, जब छात्रों की कम संख्या के कारण सरकार ने उन स्कूलों को बंद कर दिया। सरकार की नीति अब भी वही चल रही है, इसलिए भविष्य में सुनने को मिल सकता है कि इन एक लाख 11 हजार स्कूलों को भी बंद कर दिया गया है। जिम्मेदारी से भागने का यह सबसे आसान रास्ता है। पर क्या सरकार को जिम्मेदारी से भागना चाहिए? सरकार ही जिम्मेदारी से भागेगी, तो कौन हमारे बच्चों को संभालने के लिए आगे आएगा? सरकार को इस बारे में सोचना चाहिए। उसने जो नई शिक्षा नीति का बिगुल बजाया है, क्या वह बिना शिक्षकों के बुलंद आवाज में बजता रह सकता है। एक तरफ शिक्षकों की कमी और दूसरी ओर नई शिक्षा नीति। सर्वथा विरोधाभासी तस्वीर, जिसका खमियाजा बच्चे भुगतते आ रहे हैं। ऐसी अनदेखी लगातार होती रही तो इससे प्रभावित बच्चे जिंदगी भर सिस्टम को कोसते रहेंगे।

आपकी बात

सत्ता प्राप्ति ही लक्ष्य

राजनीतिक दल सत्ता प्राप्ति के लिए कोई भी हथकंडा अपनाने के लिए तैयार रहते हैं। सत्ता पाने का सबसे आसान तरीका है धार्मिक और जातीय उन्माद पैदा करना। इसलिए नेता जातियों को आपस में लड़ाने और धार्मिक भावनाओं को भड़काने में लगे रहते हैं।

-महेश सक्सेना, भोपाल

बेगुनाह होते हैं निशाना

नेता अपने लाभ के लिए जातीय और धार्मिक उन्माद पैदा करते हैं। वे वैमनस्यता फैलाकर आगे बढ़ना चाहते हैं। इसका खमियाजा कई बेगुनाहों को भुगतना पड़ता है, लेकिन नेताओं को इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। ऐसे नेताओं को जनता ही सबक सिखा सकती है?

-प्रियंका महेश्वरी, जोधपुर

आज का सवाल

लखीमपुर प्रकरण में पुलिस की भूमिका पर सवाल क्यों?

आपकी बात पर अपनी राय भेजने के लिए 98292-66081 व्हाट्सएप करें

patrika.com पर पढ़ें

पाठकों की प्रतिक्रियाएं



इसे स्कैन करें

पत्रिकायन का सवाल था, 'नेता धार्मिक और जातीय उन्माद क्यों पैदा करते हैं?' इस विषय पर प्राप्त कुछ प्रतिक्रियाएं ऑनलाइन दी जा रही हैं।

https://bit.ly/3uVhOJK



गुलाब कोठारी

प्रधान संपादक
पत्रिका समूह
@patrika.com



शरीर ही ब्रह्माण्ड

नवरात्रा में हम जहां सृष्टि के नवभाव की कामना करते हैं वहीं मुक्ति की प्रार्थना भी इस काल में आवश्यक है। हमारा परम लक्ष्य इस सांसारिक आवागमन चक्र का निरोध ही है। अध्यात्म संस्था में मानव भी अक्षर प्राणों से समन्वित रहता है। अतः उसमें भी देवासुर भावों की उपस्थिति है।

नवरात्रा शक्ति का ही पूजन है। नवरात्रा शब्द नवीनता का सूचक है। नवो नवो भवति जायमानो रूप में नवशक्तियों के जागरण की रात्रियां ही नवरात्रा कहलाती हैं। गीता में कहा गया है कि जब संसार सोता है, तब योगी जागता है।

सृष्टि विस्तार का अनुष्ठान : नवरात्रा

हमारा चातुर्मास संवत्सर का प्रलयकाल है। मूल प्रलयकाल में प्राणी नहीं रहते। प्राणिक ऊर्जाएं, विशेषतः आसुरी ऊर्जाएं रहती हैं। देव जलमग्न होकर सुप्त अवस्था में चले जाते हैं। सृष्टि की गतिविधियां ठप्प हो जाती हैं। देवों पर आसुरी आक्रमण तेज हो जाते हैं। विष्णु-सोम लोक के अधिष्ठाता निद्रामग्न रहते हैं। प्रलय का यह अंधकार कालरात्रि कहलाता है। असुरों से रक्षा और जल प्लावन से मुक्ति के लिए, देवगण त्राहि-त्राहि करते हुए देवी की प्रार्थना करते हैं। शक्ति गीता में देवता कहते हैं कि देवासुर संग्राम में दुर्जय असुरों की पराजय और हमारी जय आपकी ही अपार कृपा का फल है-

विबुधासुरसंग्रामे ह्यसुराणां पराजयः।

अभून्नो विजयो देवि! तत्तेऽपारकृपाफलम्।।

दुर्गा को तीनों गुणों-सत्त्व, रज, तम की अधिष्ठात्री कहा है तथा तीनों का समभाव ही दुर्गा हैं। समभाव में तो सृष्टि भी नहीं होती। दुर्गा सप्तशती में वर्णित है कि देवी ने तीन असुरों के वध के लिए त्रिविध रूपों को धारण किया। इनमें महाकाली ने मधु-केटभ का, महालक्ष्मी ने महिषासुर का और महासरस्वती ने शुम्भ-निशुम्भ का संहार किया। अध्यात्म संस्था में ये ही क्रमशः क्रोध, लोभ तथा काम के प्रतीक हैं।

गीता में काम-क्रोध-लोभ को नरक के द्वार कहा है। काम से क्रोध और काम से ही तुष्णा का उद्भव है। इच्छा की अपूर्णता से क्रोध तथा काल्पनिक सुख की अनुभूति से तुष्णा या लोभ होता है। कामना तो मन का बीज है ही। सभी कर्मों का आधार होता है। कामना की तीव्रता ही आवेश या आक्रोश है। आत्मा जब इन कामनाओं से युक्त हो जाता है तब तो प्राणिक बल और भी बढ़ जाता है। इन पर विजय पाने का प्रयास ही स्वभाव में क्रिया नहीं है, दिशा मात्र है। कामना का स्वरूप ही है। दुर्गा के तीनों स्वरूप काम, क्रोध, लोभ का संहार करते हैं।

ब्रह्म के साथ मायाभाव संयुक्त होने पर सृष्टि आगे बढ़ती है। विष्णु माया ही ब्रह्म के मन में कामना पैदा करती है-“**या देवी सर्वभूतेषु क्षुधा रूपेण संस्थिता**”। दुर्गा सप्तशती के इस पद में क्षुधा के दैवीय स्वरूप को बताया गया है कि ब्रह्म के मन की एकोऽहं बहुस्याम् कामना ही जगत् के विस्तार का मूल कारण है। स्वयंभू ब्रह्मा तथा परमेश्वी विष्णु के मिथुन भाव से सूर्य का प्रादुर्भाव होता है। सूर्य, जगत का पिता बनकर आगे मृत्युलोक की सृष्टि करता है।

हमारे यहां भी चातुर्मास में देव सो जाते हैं। सभी पुण्य-शुभ कार्य ठहर जाते हैं, क्योंकि हमको देव उपलब्ध ही नहीं होते। जल प्लावन के कारण पृथ्वी की अग्नि मन्द पड़ जाती है। पृथ्वी मूलतः पिण्ड है। इसके चारों ओर वसु रूप घन अग्नि का वास रहता है। पृथ्वी के आठ आग्नेय वसु ही ग्यारह रुद्र, बारह आदित्यों के साथ मिलकर वैश्वानर अग्नि उत्पन्न करते हैं। इनमें पार्थिव अग्नि ही घन है। शेष तरल और विरल है। वसु के टण्डा पड़ते ही प्राकृतिक अग्निसोमात्मक यज्ञ में बाधा उत्पन्न हो जाती है। अतः सर्वप्रथम इस जल-प्लावन से मुक्ति चाहिए।



यूं तो जल का देवता वरुण है, किन्तु इन्द्र सूर्य के प्रकाश रूप में (विद्युत रूप में) वर्षा भी कराता है और वही एकमात्र देवता है जो सूर्य किरणों के द्वारा जल को पुनः ऊपर खींचता है। भूपिण्ड का पूर्वाद्द तो वैसे भी इन्द्र के आधिपत्य का क्षेत्र है। पश्चिमाद्द वरुणधिपत्य का। अतः भोगवादी/भौतिकवादी है। इन्द्र के कारण पूर्व में अध्यात्म प्रधान रहा है। जैसे जैसे आसोज माह की चटक धूप जल को सोखती जाती है, भू-पिण्ड का तापमान बढ़ने लगता है। इसके मुख्य रूप से दो परिणाम आते हैं। एक-वैश्वानर अग्नि के व्यवस्थित होने से प्राणियों की पाचनशक्ति में सुधार होने लगता है। दो-भूपिण्ड के तापमान में वृद्धि होने से वनस्पति/औषधि एवं प्राणियों में परिपक्वता बढ़ती है। खेतों में फसल पकने लगती है। तभी प्रत्येक दाने में जीव पड़ने लगता है। पंचाग्नि के सिद्धान्त के अनुसार जीव, वर्षा के जल द्वारा पृथ्वी की योनि में आहूत होता है। अन्न एवं अन्य प्राणियों की सृष्टि होती है। यही अन्न हमारे शरीर की वैश्वानर अग्नि में आहूत होकर शरीर की धातुओं का निर्माण करता है। यही रेत रूप में शुक्र में आहूत होकर संतति पैदा करता है। अर्थात् भूपिण्ड की उष्णता से ही सृष्टि आगे बढ़ती है। यही ब्रह्म का विवर्त है। अन्न ही ब्रह्म है। ब्रह्म के बीज का वाहक भी है। सभी चौरासी लाख योनियों का प्राण-तत्त्व इसी अन्न पर आधारित है।

इसका एक पक्ष यह भी है कि पृथ्वी को ही लक्ष्मी कहते हैं। पृथ्वी का नाम ही विष्णुपाद है। पृथ्वी यदि पुनः गर्म नहीं होती तो इसके गर्भ में पकने वाले सोना, चांदी, लोहादि का निर्माण भी अधूरा रह जाता है। कैसा न्याय है प्रकृति का- पृथ्वी जल से ही उत्पन्न होती है और जल ही विनाश का कारण बनता है। पृथ्वी धनों की दात्री है। घन-धान्य देने वाली पृथ्वी रूपा लक्ष्मी को नवान्न का भोग (अन्नकूट) चढ़ाया जाता है-“**या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मी रूपेण संस्थिता**।” दुर्गा चूँकि प्रकृतिरूपा है, तीनों गुणों की समन्वित अवस्था

है। प्रकृति ही जननी है। वही परा है, वही अपरा है। कृष्ण भी कह रहे हैं कि-

“भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।

अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।।” गीता 7.4

“अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।

जीवभूतां महाबाहो ययैवं धार्यते जगत्।।” गीता 7.5

पंच महाभूत, मन, बुद्धि, अहंकार में मेरी आठ प्रकार की जड़ प्रकृति है। जिससे यह सम्पूर्ण जगत धारण किया जाता है, वह मेरी चेतन प्रकृति है।

नवरात्रा शक्ति का ही पूजन है। नवरात्रा शब्द नवीनता का सूचक है। **नवो नवो भवति जायमानो** रूप में नवशक्तियों के जागरण की रात्रियां ही नवरात्रा कहलाती हैं। गीता में कहा गया है कि जब संसार सोता है, तब योगी जागता है। रात्रि काल (सूर्यास्त के बाद) शरीर की सारी गतिविधियां शिथिल पड़ जाती हैं। इन्द्रियों और मन की चंचलता शान्त हो जाती है। (दुराचारी और आसुरी वृत्ति वाले लोगों की नहीं।) बाहरी व्यवधान भी न्यूनतम रह जाते हैं। साधना की दृष्टि से इस काल को श्रेष्ठ ही कहा गया है। दिन में देवगण विचरण करते हैं, रात्रि में शक्तियां। वे ही असुरों से संघर्ष करती हैं। जो लक्ष्मी को बुलाने के स्थान पर स्वयं उसके घर जाना चाहता है, उसके लिए रात्रिकाल ही वरदान है। दूसरा पक्ष यह भी है कि वर्षाऋतु में सूर्यदेव के दर्शन होते ही कहा है! अहर्निश रात्रि-सा वातावरण रहता है। रात्रि का पर्यायवाची है अंधकार। जो लक्ष्मी को बुलाना चाहते हैं, वे ही रात्रिकाल को भोग चाहते हैं। उल्लू का कार्य क्षेत्र अंधकार ही रहता है। उल्लू कौन? जो कर्म तो करे किन्तु फल भोगना नहीं चाहे। धन तो अकूत चाहे किन्तु घर में नहीं रखना चाहे। स्त्री संग तो चाहे, किन्तु सन्तान न चाहे। नशा करके विवेक मुक्त होना चाहे। ऐसा व्यक्ति कहा जाकर ठहरेंगा!

प्रकृति, स्वभाव को कहते हैं। लक्ष्मी स्वभाव को दो प्रकार से नियंत्रित करती है। भूपिण्ड पर अंधकार उसका क्षेत्र है। व्यसन-वासनाएं उसके क्रियाकलाप हैं। पृथ्वी का साम सूर्य के आगे तक फैला हुआ है। वहीं बैकुण्ठ धाम है। व्यक्ति चाहे तो अंधकार का चयन कर नरक में जा सकता है अथवा अध्यात्म को उन्नत कर बैकुण्ठ में।

नवरात्रा में हम जहां सृष्टि के नवभाव की कामना करते हैं वहीं मुक्ति की प्रार्थना भी इस काल में आवश्यक है। हमारा परम लक्ष्य इस सांसारिक आवागमन चक्र का निरोध ही है। अध्यात्म संस्था में मानव भी अक्षर प्राणों से समन्वित रहता है। अतः उसमें भी देवासुर भावों की उपस्थिति है। वह अपने आसुर प्राणों को जीतकर मुक्ति की वैसे ही कामना करता है जैसे देवगण देवी से प्रार्थना करते हैं। देवता, देवी से कहते हैं कि वे कर्म की गति का रहस्य बताएं और जीवनमुक्ति देने वाले अपने विराट स्वरूप को प्रकट करें। ताकि वे उसमें लय हो सकें।

क्रमशः
gulabkothari@epatrika.com

आत्म-दर्शन

शिक्षा का असर

हम हिंसा और दूसरे धर्मों के प्रति घृणा को न्यायसंगत ठहराने के लिए कभी ईश्वर का नाम न लें। हर प्रकार के चरमपंथ की निंदा करें। साथ ही हर व्यक्ति के चुनाव करने एवं अपने अंतःकरण के अनुसार कार्य करने के अधिकार की रक्षा करें। यह विवेक शिक्षा से ही प्राप्त होता है। यह सही है कि अतीत में जाति, संस्कृति और अल्पसंख्यक के आधार पर भेदभाव होता था। आज हम हर व्यक्ति को पहचान एवं प्रतिष्ठा की रक्षा करना चाहते हैं तथा हर युवा को सिखाना चाहते हैं कि वह सभी को बिना भेदभाव के स्वीकार करे। शिक्षा हमें दूसरे व्यक्ति को बिना निंदा किए स्वीकार करने की प्रेरणा देती है। यह बात सही है कि अतीत में महिलाओं,

बच्चों और कमजोर लोगों के अधिकारों का सम्मान नहीं हुआ। आज हम उनके अधिकारों के प्रति भी दृढ़ता से प्रतिबद्ध हैं और आवाजहीन लोगों की आवाज बनना सीख रहे हैं। शिक्षा हमें शारीरिक हिंसा से दूर रहने और नैतिकता का पालन करने के लिए भी प्रेरित करती है। शिक्षा हमें हमारी धरती माता से प्रेम करना सिखाती है, ताकि भोजन एवं संसाधनों को नष्ट न किया जाए। साथ ही वह सिखाती है कि उन संसाधनों को आपस में उदारता से बांटा जाए, जिनको ईश्वर ने हम सभी के जीवन के लिए दिया है। हम भावी पीढ़ी को अधिक शांत और टिकाऊ जीवनशैली अपनाने के लिए प्रशिक्षित कर सकते हैं।



पोप फ्रांसिस

ईसाई धर्म गुरु
@patrika.com